International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol.11 No.2 Nov-Dec 2023

भारतीय शास्त्रीय संगीत में ख्याल गायकी और राग का महत्व : एक अध्ययन

डॉ. शिखा ममगाई
असोसिएट प्रोफेसर
संगीत, पंडित ललित मोहन शर्मा परिसर, ऋषिकेश।
Corresponding Author – डॉ. शिखा ममगाई
DOI- 10.5281/zenodo.13365319

सारांशः

शास्त्रीय संगीत का अभिप्राय एक विशेष प्रकार के संगीत से है जिसमें शास्त्र के नियमों के अनुसार गायन–वादन किया जाता है। शास्त्रीय संगीत को समझने के लिए इसके शास्त्र की जानकारी होना अत्यन्त आवश्यक होती है। इस संगीत में नियमों का पालन अनिवार्य रूप से करना होता है। शास्त्रीय संगीत के नियम मुख्यतः राग–गायन को ध्यान में रखकर बनाये गये हैं जिनसे राग का महत्व स्पष्ट होता है इसलिए शास्त्रीय संगीत को राग–संगीत कहना अनुचित न होगा। शास्त्रीय संगीत पूर्णतः राग रूपी नींव पर आधारित है इसलिए शास्त्रीय संगीत की चर्चा होते ही सर्वप्रथम राग शब्द का स्मरण हो आता है। यद्यपि संसार की लगभग सभी संगीत प्रणालियाँ स्वर तथा लय पर ही आधारित हैं किन्तु राग की अवधारणा को भारतीय शास्त्रीय संगीत की विशेषता माना गया है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक भारतीय संगीत में अनेक परिवर्तन हुए हैं और यह स्वाभाविक भी है। वर्तमान समय में भी भारतीय शास्त्रीय संगीत को जो स्थिरता प्राप्त है उसका आधार राग ही है। राग भावों तथा संगीत कला को प्रदर्शित करने का ऐसा माध्यम है जिसमें भाषा, स्वर, लय, कल्पना तथा कलाकार की कुशलता इन सभी का सुचारू रूप से सामंजस्य दृष्टिगोचर होता है। कालान्तर में हुए विभिन्न राजनैतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित परिवर्तनों के फलस्वरूप आधुनिक समय में राग को एक स्थिर स्वरूप प्राप्त हुआ है, जिसमें पण्डित विष्णु नारायण भातखण्डे जी का योगदान अविस्मरणीय है। यहाँ स्थिरता का अर्थ एक निश्चित प्रणाली एवं स्वरूप से है अन्यथा क्रियात्मक रूप से शास्त्रीय संगीत एक परिवर्तनशील कला है जिसमें समय–समय पर होने वाले परिवर्तनों के अतिरिक्त प्रत्येक प्रदर्शन के समय परिवर्तनशीलता अर्थात् नवीनता दृष्टिगोचर होती है। वर्तमान में राग संगीत का यह स्वरूप भी परिवर्तनों का प्रतिफल है। आधुनिक राग संगीत के स्वरूप की चर्चा करते समय इसके विभिन्न पक्षों की ओर ध्यान आकर्षित होना स्वभाविक है। इन पक्षों में आधुनिक प्रचलित गायन शैलियाँ और उनमें विभिन्न रागों का प्रयोग, प्रस्तुतिकरण की पद्धति, राग संगीत का शिक्षण, उसका प्रशिक्षण और इनमें नये–नये प्रयोग आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्राथमिक दृष्टि से देखने पर राग एक विशिष्ट स्वरूप अथवा रंग या चरित्र की भांति दिखाई देता है जो किसी गायन शैली के माध्यम से ही साकार रूप प्राप्त करता है। अगर यह कहा जाये तो गलत नहीं होगा कि कोई गायन शैली ही राग के रूप को साकार करती है। आधुनिक समय में ख्याल गायन शैली को ही मुख्यतः राग संगीत के प्रस्तुतिकरण का मुख्य माध्यम माना जाता है। वर्तमान समय में ख्याल गायन शैली इतनी अधिक प्रचलित है कि यदा–कदा ख्याल गायन को ही राग संगीत के पर्याय के रूप में प्रयोग कर लिया जाता है। वर्तमान समय में राग संगीत को जो स्थिरता प्राप्त है उसमें ख्याल गायन का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है।

बीज शब्द :– संगीत, शास्त्रीय, राग, ख्याल, गायन–शैली, बंदिश।

प्रस्तावनाः

चूंकि ख्याल गायन शैली पूर्णतः राग पर अवलम्बित है तथा राग ही ख्याल गायन का आधार है इसलिए राग क्या है? यह जानना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। यह सर्वविदित है कि मतंगमुनि कृत बृहद्देशी में सर्वप्रथम राग परिभाषित रूप में प्राप्त होता है उन्होने ध्वनि की उस विशेष रचना को राग कहा है जो स्वर और वर्ण से विभूषित हो और जो जन के चित्त का रंजन कर सके। अर्थात स्वरों का ऐसा सन्निवेश और संचरण जिसे सुनकर चित्त को रंजन की अनुभूति हो वह राग कहलाता है। मतंगमुनि ने राग की उत्पत्ति जाति से मानी है तथा जाति के दस लक्षण ग्रह, अंश, तार, मन्द्र, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, औडव व षाडव हैं। कालान्तर में यही जाति लक्षण राग के दस लक्षण माने गये। राग प्रस्तुतिकरण तथा निर्माण में प्रयुक्त होने वाले नियमों अथवा लक्षणों को राग गायन में अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। ये राग लक्षण राग की परिवर्तित स्थिति एवं नवीन सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जिस प्रकार किसी स्वादिष्ट व्यंजन को बनाने के लिए विशेष पदार्थो की अथवा किसी भवन को बनाने के लिए ईंट, पत्थर इत्यादि वस्तुओं की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार राग के निर्माण एवं उसके प्रस्तुतिकरण में राग के लक्षणों अथवा राग के नियमों की प्रमुख भूमिका होती है। जब कोई कलाकार राग को प्रस्तुत करता है तो वह इन्हीं नियमों के अन्तर्गत राग को स्थिर रूप देने का प्रयत्न करता है। राग के दस लक्षण विद्वानों ने ग्रह, अंश, तार, मन्द्र, न्यास, अपन्यास, औडव, षाडव, अल्पत्व तथा बहुत्व बतायें हैं। वर्तमान समय में भी इन राग लक्षणों का प्रयोग भारतीय शास्त्रीय संगीत में किया जाता है यद्यपि वर्तमान समय में इन लक्षणों में परिवर्तन आया है किन्तु फिर भी इन्हीं राग लक्षणों में हेर–फेर तथा नियमों को ध्यान में रखकर रागों के क्रियात्मक स्वरूप में विभिन्न प्रयोग एवं परिवर्तन किये जा रहे हैं जिससे नवीन रागों का आविष्कार किया जा सके तथा परम्परागत रागों का स्वरूप और उत्कृष्ट बनाया जा सके। इन राग लक्षणों में ग्रह उस स्वर को कहा जाता है, जिस स्वर से किसी राग का गायन–वादन प्रारम्भ होता है। अंश स्वर से तात्पर्य जो स्वर गीत में सबसे अधिक प्रयोग होता है वर्तमान समय में वादी को अंश स्वर का पर्याय कहा जाता है। तार स्वर से ज्ञात होता है राग तार सप्तक में किस सीमा तक जा सकता है। इसी प्रकार मन्द्र से तात्पर्य मन्द्र स्थान में राग के विस्तार

की सीमा का निर्धारण। न्यास, अपन्यास का तात्पर्य किसी राग में ठहराव से है किसी राग में किस स्वर पर ठहरना है। अल्पत्व, बहुत्व से यह ज्ञात होता है कि राग में किसी स्वर का प्रयोग किस परिमाण में हुआ है तथा औडव, षाडव से राग में प्रयोग होने वाले स्वरों की संख्या ज्ञात होती है। उपरोक्त लक्षणों के अतिरिक्त पं. विष्णु नारायण भातखण्डे जी ने राग निर्मिति एवं उसके प्रस्तुतिकरण हेतु कुछ नियमों का प्रतिपादन किया है जिसका प्रयोग भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रमुखता से किया जाता है।

राग रंजक एवं माधुर्ययुक्त होना चाहिए क्योंकि इसी कारण उनका गायन–वादन किया जाता है और वह अपना अस्तित्व बनाये रखते हैं। प्रत्येक राग किसी थाट से उत्पन्न होना चाहिए। राग में वादी, संवादी, स्वर, वर्ण, नाद, आरोह, अवरोह, जाति, वर्जित स्वर, पूर्वांग व उत्तरांग आदि तत्व आवश्यक होते हैं। राग में कम से कम पाँच स्वरों का होना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त राग में छः और सात स्वरों का प्रयोग भी किया जा सकता है। किसी भी राग में मध्यम एवं पंचम को एक साथ वर्जित नहीं किया जा सकता है। राग में षडज स्वर कभी वर्जित नहीं होता है। षडज को आधार स्वर अथवा 'स्वरित' कहा जाता है। 'स्वरित' की स्थापना के पश्चात ही अन्य स्वरों की स्थिति निर्धारित होती है। किसी भी राग में स्वरों के दोनों रूप जैसे (शुद्ध मध्यम, तीव्र मध्यम), (शुद्ध नि, कोमल नि) आदि प्रयुक्त नहीं होते किन्तु समय इस नियम में अपवाद भी मिलता है और वैचित्र्य निर्माण के लिए स्वरों के दोनों रूपों का प्रयोग सौन्दर्य वृद्धि के लिए किया जाता है। रागों के गायन–वादन के लिए निश्चित समय निर्धारण दिन और रात के आठ प्रहरों में किया गया है। इन नियमों से राग की निर्मिति और ख्याल गायन में बहुत सहायता मिलती है।

वर्तमान समय में ख्याल गायन शैली का स्वरूप– वर्तमान समय में ख्याल गायन शैली भारतीय शास्त्रीय संगीत की एक महत्वपूर्ण तथा प्रचलित विधा मानी जाती है। शास्त्रीय संगीत में गायन की चर्चा होते ही सर्वप्रथम ख्याल गायन का स्वरूप मस्तिष्क में उभर आता है। अर्थात् वर्तमान समय में ख्याल गायन शैली भारतीय शास्त्रीय संगीत का पर्याय बन चुकी है। ख्याल गायन शैली को लोकप्रियता का प्रमुख कारण है कि इस शैली ने भारतीय संगीत की कई गायन शैलियों की विशेषताओं को आत्मसात कर लिया है। जहाँ एक ओर इस शैली में ध्रुपद गायन विधा की गंभीरता एवं शालीनता हैं वहीं दूसरी ओर ठुमरी शैली की भांति चंचलता और चपलता है। ख्याल शब्द अरबी–फारसी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ कल्पना से लगाया जाता है क्योंकि ख्याल गायन की प्रस्तुति में कलाकार को अपनी कल्पनाओं को अभिव्यक्ति करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। 'कल्पना' शब्द ख्याल गायन शैली की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। नवीन कल्पनाओं के न होने या नये स्वर समुदाय अथवा स्वर संयोजना न होने पर गायन यान्त्रिक अधिक लगता है। स्वरों के लगाव पर ही राग का आकर्षण केन्द्रित रहता है केवल गणित के आधार पर तान, आलाप, बोलतान आदि से ही ख्याल गायन नहीं होता है। कलाकार द्वारा उसकी कल्पना के सहारे से राग के विभिन्न अंगों को कलात्मकता से प्रस्तुत किया जाता है तभी कल्पना और भावना मिलकर श्रोताओं तथा स्वयं कलाकार को भी आत्मिक आनन्द की अनुभूति कराते हैं। ध्रुपद के बाद 'ख्याल' गायन ने समूचे संगीत जगत को प्रभावित किया है, सभी गायन शैलियों में यह शैली सर्वाधिक प्रचलित होकर शास्त्रीय संगीत का पर्याय बन चुकी है। अधिकांश श्रोता जो शास्त्रीय संगीत के कम जानकार होते हैं वह ख्याल गायन शैली को ही शास्त्रीय संगीत का मुख्य स्वरूप समझते हैं।

वर्तमान समय में ख्याल गायन शैली की स्थिति, स्तर व लोकप्रियता को देखकर यही कहा जा सकता है कि ख्याल के स्वरूप को इतना विस्तार, सम्मान व विशद विश्लेषण का विषय बनाने का श्रेय पूर्ववर्ती विद्वानों के अतिरिक्त आधुनिक समय के संगीत विद्वानों, शिक्षकों तथा संगीत संस्थाओं को जाता है जिसके कारण ख्याल शैली शास्त्रीय संगीत की प्रधान शैली के रूप में उभरी है।

आधुनिक ख्याल गायन शैली के तीन प्रकार माने जाते हैं। प्रथम प्रकार विलम्बित ख्याल होता है जिसका गायन विलम्बित अर्थात धीमी लय या गीत में किया जाता है जिसे बड़ा ख्याल भी कहा जाता है। विलम्बित ख्याल में आलाप, बोल आलाप, तान, सरगम के माध्यम से बढ़त की जाती है, इन प्रयोगों में स्वर संयोजन, मींड, गमक, ताल इत्यादि से उत्पन्न सौन्दर्य का अत्यधिक महत्व होता है। विलम्बित ख्याल की बन्दिश भी मुक्त छन्द के रूप में होती है। बन्दिश अधिक बड़ी नहीं होती है इसमें एक स्थाई तथा एक अन्तरा होता है और ये स्थाई और अन्तरा भी एक या दो आवर्तनों से अधिक नहीं होता है। सर्वप्रथम स्थाई, अन्तरा को ताल के साथ बाँधा जाता है राग की बढ़त आलाप तथा बोल आलाप के माध्यम से की जाती है। इसके पश्चात कलाकार बीच–बीच में सरगम भी लेते हैं जो मींड–गमक युक्त होती है इन्हें तान, सरगम भी कहा जाता है। अन्त में तान की प्रक्रिया आरम्भ होती है जिसे पहले बराबर की लय में किया जाता है उसके बाद कुछ कलाकार स्वरूचि या अपने घराने की परम्परा के अनुसार गमकयुक्त, आड़लय या बोल तानों का प्रयोग करते हैं। विलम्बित ख्याल के पश्चात् मध्यलय के ख्याल गाने का भी प्रचलन भारतीय शास्त्रीय संगीत में है। इसकी गति विलम्बित लय की अपेक्षा उससे दुगुनी रहती है। यह विलम्बित ख्याल की भाँति गंभीर न होकर चंचल प्रकृति का होता है। मध्यलय ख्याल में स्थाई–अन्तरा के अतिरिक्त छोटी–छोटी लयकारी, मुख्य आलाप, बोलयुक्त आलाप, तान इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। कलाकार अपनी कुशलता के अनुसार इसमें लय–ताल के साथ सामंजस्य बिठाता है। आजकल यह प्रचलन है कि कलाकार विलम्बित ख्याल गाने के बाद मध्यलय ख्याल को न गाकर सीधे द्रुत लय का ख्याल गाना पसन्द करते हैं। परन्तु यह भी विभिन्न घरानों या कलाकार की रूचि के ऊपर निर्भर करता है। द्रुत ख्याल, मध्यलय ख्याल गाने के पश्चात् गाया जाता है इसकी लय मध्य लय ख्याल की अपेक्षा दुगुनी तेज होती है। यह मध्यलय ख्याल से अधिक चंचलता लिए होता है। इसमें भी मध्यलय ख्याल की भांति तान, सरगम, बोलतान आदि का बखूबी प्रयोग किया जाता है। विलम्बित ख्याल के साथ अधिकतर तिलवाड़ा ताल, एकताल, तीनताल, झूमरा ताल आदि का प्रयोग किया जाता है तथा मध्य लय और द्रुत लय के ख्याल के साथ तीनताल, झपताल, रूपक, एकताल का प्रयोग प्रमुखता से किया जाता है।

वर्तमान समय में ख्याल शैली के सांगीतिक स्वरूप में स्थाई, अन्तरा का विशेष महत्व होता है। बन्दिश के शब्द, स्वर–संयोजन तथा स्थाई अन्तरे का चलन तथा राग विस्तार में आलाप, तान इत्यादि की बढ़त आदि ही राग के स्वरूप को विशिष्ट आधार प्रदान करते हैं। स्थाई से गायन का प्रारम्भ होता है अर्थात् बन्दिश का प्रथम भाग स्थाई कहलाता है तथा द्वितीय भाग अन्तरा कहलाता है। ख्याल शैली में स्वर की प्रधानता होने पर भी बन्दिश का महत्व भी

बहुत है। बन्दिश का उद्देश्य राग के रूप को स्पष्ट करना तथा उसके माध्यम से श्रोताओं को आनन्द की प्राप्ति कराना। एक उत्कृष्ण एवं सम्पूर्ण बन्दिश में राग में प्रयुक्त होने वाली स्वरावलियों का समुचित प्रयोग, उसके ताल विन्यास और शब्दों के चयन की विशेषता होती है जिसमें उस राग का सम्पूर्ण स्वरूप स्पष्ट देखा जा सकता है। यह कहना अनुचित न होगा कि बन्दिश राग का वह दर्पण है जिसके माध्यम से राग की सभी विशेषताओं के दर्शन हो जाते हैं।

वर्तमान समाज में ख्याल शैली के प्रचलित होने के कई कारण हैं जैसे– गायन में स्वर, लय व शब्दों का वैचित्र्य व विविधता आदि। आज कलाकार अपनी गायकी में प्रयोग करने के लिए पूर्णतः स्वतन्त्र है। ख्याल के आधुनिक स्वरूप के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ये केवल श्रृंगारिक रचनाओं के लिए ही उपयुक्त नहीं है अपितु इसमें ईशस्तुति, ऋतु वर्णन, कृष्ण लीला, विवाह प्रसंग, नवरस वर्णन, संगीत सम्बन्धी सिद्धान्त व अन्य विषयों की रचनायें भी प्राप्त होती हैं। हम यह कह सकते हैं कि ख्याल गायन अपनी उत्पत्ति से लेकर वर्तमान समय में अपनी उन्नत अवस्था में है जिसमें उसे इस स्थिति में पहुंचाने में सदारंग–अदारंग सहित अनेक विद्वानों के अतिरिक्त विभिन्न घरानों, शिक्षण संस्थानों, संगीत संस्थानों, संगीत सम्मेलनों, आकाशवाणी, दूरदर्शन केन्द्रों इत्यादि का महत्वपूर्ण योगदान है।

निष्कर्ष–

उपरोक्त अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारतीय शास्त्रीय संगीत के उन्नयन में राग और ख्याल गायन शैली का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। ख्याल शैली की विकास यात्रा प्रारम्भ होने के पश्चात समय–समय पर इसमें परिवर्तन समाज की रूचि अनुसार आते गये। इस शैली की यह विशेषता है कि इसने अन्य गायन शैलियों की विशेषतायें भी अपने में समाहित कर उन्हें अपने रंग में रंग लिया। ध्रुपद, धमार, टप्पा, ठुमरी, कव्वाली आदि गायन शैलियों की विशेषताओं को ख्याल शैली ने ग्रहण कर भारतीय शास्त्रीय संगीत में अपनी विकास रूपी पताका को लहराया है। वर्तमान समय में ख्याल गायन शैली इतनी अधिक लोकप्रियता प्राप्त कर चुकी है जितनी किसी अन्य गायन शैली ने अपने युग में शायद ही प्राप्त की हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. आचार्य, बृहस्पति, संगीत चिन्तामणि, संगीत कार्यालय हाथरस, 1976, पृष्ठ–76
2. शर्मा, डॉ. महारानी, संगीतमणि भाग–1, भुवनेश्वरी प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–2012, पृष्ठ–117
3. संगीत कला विहार पत्रिका, अप्रैल–1975, गांधर्व महाविद्यालय मण्डल, पृष्ठ–171
4. संगीत पत्रिका, ख्याल अंक, संगीत कार्यालय हाथरस, जनवरी–फरवरी–1976, पृष्ठ–8–71
5. सराफ, डॉ. रमा, भारतीय संगीत सरिता, विद्यानिधि प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2003, पृष्ठ–50–80
6. सक्सेना, महेश नारायण, संगीत शास्त्र भाग–2, गणेश पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद, 1954 पृष्ठ–74–75